



भारतेंदु हरिश्चंद्र की भाषा दृष्टि और राष्ट्रीय चेतना

डॉ. आभा शर्मा

हिंदी विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

सारांश

भारतेन्दु हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के माध्यम से देश की जनता में राष्ट्रीयता की चेतना फैला देना चाहते थे। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिन्दी को राष्ट्रीयता की भावना का वाहक बनाया। भाषा को उन्होंने आम बोलचाल की भाषा से जोड़ा और समाज की नवीन चेतना के प्रसार का माध्यम बनाया। इस प्रकार उन्होंने भाषा को राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय चेतना से भाषा को समृद्ध करने का दुहरा काम सम्पन्न किया। यह भी एक कारण है कि भारतेन्दु हिंदी के प्रति जनता का समर्थन जुटाकर आंदोलन की सृष्टि करने में समर्थ हुए। भारतीय जनता की आम बोलचाल की भाषा को अपनाते हुए उन्होंने उस पर विशेष ध्यान दिया तथा व्यावहारिक स्तर पर अपनी रचनाओं में इसको आधार बनाया।

मूलशब्द: राष्ट्रीय चेतना, अंग्रेजी राज, भाषा नीति, गद्य विधा, साहित्यिक परिवर्तन

प्रस्तावना

भारतेंदु हरिश्चंद्र को आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक कहा जाता है। उन्हीं के समय में हिंदी गद्य का विकास और उसका परिमार्जन हुआ। रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि “भारतेंदु हरिश्चंद्र का प्रभाव भाषा और साहित्य दोनों पर पड़ा। उन्होंने जिस तरह गद्य की भाषा को परिमार्जित करके उसे बहुत ही चलता, मधुर और स्वच्छ रूप दिया, उसी प्रकार हिंदी साहित्य को भी नए मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया। उनके भाषा संस्कार की महत्ता को सब लोगों ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया और वे हिंदी गद्य के प्रवर्तक माने गए”¹ वास्तव में भारतेंदु राष्ट्र के प्रति समर्पित बहुत ही सशक्त रचनाकार थे। साथ ही भाषा के प्रति भी वे बहुत चेतनशील थे। उनकी भाषा राष्ट्रीय चेतना से

ओत-प्रोत है और वही राष्ट्रीय चेतना उनके पूरे लेखन में परिलक्षित भी होती है। यही कारण है कि वर्तमान संदर्भ में भारतेन्दु की भाषा पर विचार करते समय उस ऐतिहासिक संदर्भ पर ध्यान देना प्रासंगिक और उपयोगी होगा जिसके आदर्शों से भारतेन्दु हरिश्चंद्र साहित्य साधना के लिए प्रेरित हुए थे। साथ ही यह जानना भी उतना ही ज़रूरी होगा कि भाषा के प्रति भारतेन्दु का जो एक सचेत और निश्चित दृष्टिकोण था, वह उनके साहित्य में किस तरह रूपयित हुआ। लेकिन उल्लेखनीय यह भी है कि उनका यह दृष्टिकोण केवल सामाजिक उद्देश्यों से ही प्रभावित नहीं था बल्कि उसके राजनीतिक निहितार्थ भी थे। ध्यान देने की बात यह है कि भारतेन्दु ने हिन्दी भाषा और उसके प्रचार-प्रसार के प्रति अपना जो

दृष्टिकोण विकसित किया, वह कितना उचित था और किस प्रकार वह राष्ट्रीय चेतना से प्रभावित था? देखने की बात यह भी है कि भारतेन्दु व्यावहारिक स्तर पर उस दृष्टिकोण को पूरी तरह अपने साहित्य और चिंतन में किस सीमा तक उतारने में सफल हुए?

भारतेन्दु की भाषा चेतना के बारे में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "उनके प्रेरणादायक व्यक्तित्व ने हिंदी में सर्वतोन्मुखी उन्नति का सूत्रपात किया. उन्नीसवीं शताब्दी के समाप्त होते-होते हिंदी साहित्य में शक्तिशाली भाषा के सभी लक्षण प्रकट हो गए. इस समय तक कई अच्छी पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होने लगीं."² भारतेन्दु की भाषा के बारे में द्विवेदी जी ने आगे लिखा है कि "उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में भाषा के संबंध में लोकमत को सचेत करने के लिए जिस प्रकार के उद्योग हुए वह हिंदी भाषा के इतिहास में एकदम नये हैं."³ देश और देश की भाषा के प्रति प्रेम होने के कारण ही विदेशी भाषा के स्थान पर भारतेन्दु देशी भाषाओं के विकास का पक्ष लेते हैं. उसका विपुल समर्थन करते हैं. "भारतेन्दु ने 'निज भाषा' शब्द का व्यवहार किया है. 'मिली-जुली', 'आमफ़हम' और 'राष्ट्रभाषा' का नहीं. प्रत्येक जाती की अपनी भाषा है और वह निज भाषा की उन्नति के साथ उन्नत होती है."⁴

भाषा के प्रति ऐसी जागरूकता का मुख्य कारण द्विवेदी जी ने राष्ट्रीयता की भावना को माना है, जिससे हिंदी के प्रति जारी भयंकर उपेक्षा की प्रतिक्रिया ने एक प्रकार से भाषा आंदोलन की सृष्टि कर दी थी, अर्थात् उस समय हिंदी भाषा को लेकर आंदोलन की जो स्थिति उत्पन्न हो गयी थी उसका एक पक्ष राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित

था और साथ ही उस राष्ट्रीय चेतना को परिपुष्ट करने वाला था. हजारी प्रसाद द्विवेदी मानते हैं कि "भारतेन्दु की प्रेरणा ने हिंदी भाषा के आंदोलन को वास्तविक आंदोलन का रूप दे दिया. इसी जन-आंदोलन ने हिंदी को जनभाषा बनने की ओर बराबर उन्मुक्त बनाए रखा. यह जन संश्रय का ही परिणाम है कि निरंतर उपेक्षित और अपमानित होते रहने पर भी हिंदी आज सर्वोच्च गौरव की अधिकारिणी बनी है. हिंदी की शक्ति जनता की शक्ति है. वह इतनी बड़ी ताकत है कि उसके सामने बड़े-से-बड़े शक्तिशाली मनुष्य की भृकुटि निशक्त हो जाने को बाध्य है. भारतेन्दु की प्रेरणा से ही हिंदी जनभाषा बनी."⁵ हजारीप्रसाद द्विवेदी के विचारों से पता चलता है कि यह हिंदी भाषा के समर्थन में चलाए जा रहे आंदोलन का वह पक्ष था जिसका नेतृत्व भारतेन्दु कर रहे थे और जिसे व्यापक जनसमर्थन प्राप्त हुआ.

हिंदी साहित्य के इतिहास में रामचन्द्र शुक्ल ने हिंदी गद्य और गद्य के रूप में खड़ी बोली के विकास की चर्चा करते हुए भारतेन्दु पर विस्तार से लिखा है. इस दौर में अंग्रेजों की भाषा नीति के कारण भाषायी विवाद भी शुरू ही गया. शुक्ल जी ने हिंदी भाषा को लेकर भारतेन्दु युग में चले विवाद का स्वरूप निर्धारित करने का प्रयास किया है. प्रस्तुत संदर्भ में उन्होंने अंग्रेजों की साम्राज्यवादी भूमिका का उल्लेख तो किया ही है साथ ही अंग्रेजी राज के समर्थक उस भारतीयों की भूमिका पर भी विस्तार से प्रकाश डाला है जो अंग्रेजी राज के प्रबल समर्थक थे और उस समय तक भी देश के विकास की संभावना अंग्रेजी शासन के अंतर्गत ही देखते थे. इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए शुक्ल जी लिखते हैं, "जिस

समय अंग्रेजी राज भारत में प्रतिष्ठित हुआ उस समय सारे उत्तरी भारत में खड़ी बोली व्यवहार की शिष्ट भाषा हो चुकी थी.... उसके उर्दू कहलाने वाले कृत्रिम रूप का व्यवहार मौलवी मुंशी आदि फ़ारसी तालीम पाए हुए कुछ लोग करते थे।⁶ वस्तुतः इस समय की खड़ी बोली के शुक्ल जी ने दो रूप निर्धारित किए हैं. उनमें से एक उर्दू कहलाने वाला रूप बताया था जिसका व्यवहार मौलवी, मुंशी आदि फ़ारसी तालीम पाये हुए लोग करते थे, और उनके अनुसार दूसरा वह रूप था जिसका व्यवहार हिंदू, पंडित, महाजन आदि करते थे, खड़ी बोली का एक वह अतिरिक्त भी रूप था जिसका उपयोग 'संस्कृत, पढ़े-लिखे लोग या विद्वान करते थे और जिसमें हिन्दी के साथ-साथ संस्कृत के शब्द भी मिले रहते थे.

इसी दौर में विदेशी धर्म प्रचारकों ने जनता में अपने धर्म का प्रचार करना भी शुरू किया. अपने मत का जनता के बीच प्रचार करने के लिए ईसाइयों ने बाइबिल का अनुवाद खड़ी बोली में करते हुए उसके जिस रूप का ध्यान रखा उसमें अरबी-फ़ारसी अथवा संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों की बजाए आसान शब्दों के अपनाने पर बल दिया. इसीलिए जनसामान्य में बोली जाने वाली शब्दावली के प्रयोग पर विशेष बल दिया गया. "ईसाइयों ने अपनी धर्मपुस्तक के अनुवाद की भाषा में फ़ारसी और अरबी के शब्द जहाँ तक हो सका है नहीं लिए हैं और ठेठ ग्रामीण शब्द तक बेधड़क रखे गए हैं."⁷ वस्तुतः खड़ी बोली का स्वतंत्र हिंदी रूप लोकप्रिय रूप था, शुक्ल जी ने खड़ी बोली के जिस रूप की वकालत की है वह यही है- भाखापन, पंडिताउपन और मुल्लापन से दूर तथा लोकभाषाओं से प्राण तत्व लेकर चलता

हुआ और उनकी ज़मीन पर आधारित था. भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिंदी के इसी रूप को हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार और अपने साहित्य का माध्यम बनाया था.

विचारणीय प्रश्न यह है कि भाषा के इस लोकप्रिय और जन प्रचलित रूप का समर्थन अंग्रेजों ने इसलिए नहीं किया, क्योंकि यही रूप भारत में राष्ट्रीयता के विकास की प्रक्रिया को मजबूत करने वाला था. साथ ही भाषा का यह रूप हिंदी प्रदेशों के अतिरिक्त पूरे देश को एक संगठित इकाई के रूप में परिवर्तित करने की दिशा में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहा था 'अंग्रेज़ सरकार ने अंग्रेज़ी की शिक्षा के प्रचार की व्यवस्था की.' इसके लिए पहले उन्होंने अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार का प्रस्ताव पास कर दिया. "कम्पनी की सरकार ने अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार का प्रस्ताव पास कर दिया और धीरे-धीरे अंग्रेज़ी के स्कूल खुलने लगे. . . . और अंग्रेज़ी शिक्षा-व्यवस्था हो जाने पर अंग्रेज़ी सरकार का ध्यान अदालती भाषा की ओर गया। मोगलों के समय में अदालती कार्रवाइयाँ और दफ़्तर के सारे काम फ़ारसी भाषा में होते थे. जब अंग्रेज़ों का आधिपत्य हुआ तब उन्होंने भी दफ़्तरों में वही परंपरा जारी रखी."⁸

वस्तुतः 'लोक प्रचलित भाषा को अदालती कामकाज की भाषा न बनाकर उन्होंने उसकी उपेक्षा की और भाषा के नाम पर एक विवाद पैदा कर दिया." वास्तव में एक निश्चित राजनीति के अंतर्गत अंग्रेजों ने इस देश को गुलामी के शिकंजे में और भी जकड़ देने वाले उद्देश्य से ही अपनी भाषा नीति का संचालन किया। इस दौर के रचनाकारों में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ऐसे व्यक्तित्व थे

जिन्होंने अंग्रेजों की इस नीति को समझा और उसका विरोध किया. पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से और अपने नाटकों और लेखों के द्वारा भी. 'भारतेन्दु अंग्रेजों की नीति की समझते थे.'⁹ अपनी भाषा नीति को लागू करने के लिए अंग्रेजों ने सबसे पहले सबसे पहले तो खड़ी बोली के दो स्वरूपों को अलग-अलग प्रोत्साहित करके भाषा के आधार पर जनता को विभाजित कर दिया. फिर उसके लोकोन्मुख रूप की उपेक्षा की तथा सरकारी और अदालत की भाषा को जनता की भाषा से अलग किया और अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से देश की जनता को अंग्रेजी पढ़ने-पढ़ाने को ही मजबूर किया. भारत में अपने शासन की नींव मजबूत करने और उसे सुचारू रूप से चलाने में मदद करने के लिए बड़ी संख्या में अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों को तैयार करने लगे. क्योंकि अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों को ही सरकारी नौकरियां तथा मान-सम्मान मिल पाता था इसलिए लोग भी अंग्रेजी की ओर आकृष्ट हुए. ऐसी ही परिस्थिति में भारतेन्दु 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल. बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को मूल.' का मंत्र लेकर लोगों के सामने आये.

यही कारण था कि परम्परा से चली आती हुई देश की भाषा का विरोध और उर्दू का समर्थन के अंग्रेज और उनके समर्थकों ने बहुविध प्रयास किए. "विरोध प्रबल होते हुए भी जैसे देश भर में प्रचलित अक्षरों और वर्णमाला को छोड़ना असम्भव था वैसे ही परम्परा से चले आते हुए हिंदी साहित्य को भी. अतः अदालती भाषा उर्दू होते हुए भी शिक्षा विधान में देश की असली भाषा हिंदी को भी स्थान देना पड़ा."¹⁰ कहने की आवश्यकता नहीं कि आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

और उनके समकालीन अन्य महत्वपूर्ण साहित्यकारों की हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका रही है. उन्होंने साहित्य के माध्यम से स्वाधीनता की भावना की अभिव्यक्ति की, नयी चेतना और जागृति को वाणी दी और इस प्रकार तत्कालीन समाज में तेजी से हो रहे नवीन सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के अनुकूल साहित्य को ढाला. इस दौर में विविध रूपों में गद्य का विकास हुआ और इस युग में अनेक साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के माध्यम से आम जनता की भावनाओं को अभिव्यक्ति का अवसर मिला और इस प्रकार साहित्य आम जनता के निकट आया. आधुनिक काल में साहित्य का विकास बहुत तेजी से हुआ. अनेक साहित्यिक विधाओं का विकास हुआ. कविता के साथ-साथ कहानी, निबंध, समालोचना, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र और नाटक आदि अनेक विधाओं में साहित्य की रचना हुई. इस दौर के रचनाकारों ने विभिन्न सामाजिक विषयों साहित्य की रचना का आधार बनाया. को युगीन चेतना की सहज अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया. परिमाण और गुणवत्ता दोनों ही दृष्टियों से आधुनिक काल का साहित्य हिंदी साहित्य के इतिहास में विशेष महत्व रखता है.

रामचंद्र शुक्ल के महात्वपूर्ण 'हिंदी साहित्य का साहित्य' में लगभग आधे से अधिक भाग में आधुनिक काल का वर्णन किया है. उल्लेखनीय है कि नवीन चेतना के उदय और गद्य के विकास के कारण गद्य की विधाओं का विकास हुआ. इसी काल में अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी हुआ. इन पत्रिकाओं के प्रकाशन में हिंदी के अनेक

लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद, निराला, पंत आदि अनेक लेखक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन से संबद्ध रहे. इन पत्र-पत्रिकाओं में बदलते सामाजिक मूल्यों और साहित्यिक परिवर्तनों की निरंतर अभिव्यक्ति होती रही. स्पष्ट है कि राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन के दौरान हिंदी के समाचार-पत्र और पत्रिकाओं की उल्लेखनीय भूमिका रही है. राष्ट्रीय स्तर पर जन जागृति और स्वाधीनता की चेतना के प्रचार-प्रसार में भारतेन्दु हरिश्चंद्र और उनके समकालीन लेखकों की युगांतरकारी भूमिका रही है.

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने "इसी वर्ष (1868 ई. में) उन्होंने 'कविवचन सुधा' नाम की एक पत्रिका निकाली जिसमें पहले पुराने कवियों की कविताएँ छपा करती थीं पर पीछे गद्य लेख भी रहने लगे."¹¹ आरंभ में 'कविवचन सुधा' में केवल कविताएँ ही प्रकाशित होती थीं. बाद में गद्य की रचनाएँ भी इसमें छपने लगीं. धीरे-धीरे 'कविवचन सुधा' को पाक्षिक से साप्ताहिक कर दिया गया था. साहित्य के अतिरिक्त सामाजिक, राजनीतिक आदि सभी विषयों पर लेख और समालोचना आदि भी इसमें छपने लगे. पत्र इतना लोकप्रिय था कि इसका सर्वत्र मान था. उस समय की सरकारी रिपोर्ट तक में इसे हिंदी भाषा का प्रसिद्ध और सर्वजनप्रिय समाचार-पत्र बताया गया था। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस पत्र को उस समय जो समर्थन मिला वह 'बनारस अखबार' तक को नहीं मिल पाया था. 1873 में "भारतेन्दु ने 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' नाम की एक मासिक पत्रिका निकली जिसका नाम 8 संख्याओं के उपरांत

'हरिश्चंद्रचंद्रिका' हो गया. हिंदी गद्य का ठीक परिष्कृत रूप पहले पहल इसी चंद्रिका में प्रकट हुआ. जिस प्यारी हिंदी को देश ने अपनी विभूति समझा, जिसको जनता ने उत्कंठापूर्वक दौड़कर अपनाया, उसका दर्शन इसी पत्रिका में हुआ."¹²

भारतेन्दु हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के माध्यम से देश की जनता में राष्ट्रियता की चेतना फैला देना चाहते थे. उन्होंने अंग्रेजों की भाषा नीति को पहचानकर सबसे पहले खड़ी बोली के उस लोकोन्मुख स्वरूप का पक्ष लिया जिसकी अंग्रेज़ उपेक्षा कर रहे थे. "इन्होंने इसको मौलवी या राजशाही हिन्दी होने से बचाकर निज जननी की पदानुगामिनी बनाते हुए भी ऐसा नहीं होने दिया कि सर्वथा उसी के पदों में विलीन हो जाये अर्थात् दोनों ओर से अयोग्य संसर्ग से सावधानीपूर्वक बचाते हुए इसे शुद्ध मार्ग पर ले चलें."¹³ भारतेन्दु के जीवनीकार बाबू शिवदान सहाय लिखते हैं कि "ब्रजभाषा मिश्रित या अधिकांश संस्कृत शब्द मिश्रित हिंदी भाषा शुद्ध हिंदी नहीं कहला सकती थी"¹⁴

निष्कर्ष

निष्कर्ष यह है कि भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिन्दी को राष्ट्रियता की भावना का वाहक बनाया. भाषा को उन्होंने आम बोलचाल की भाषा से जोड़ा और समाज की नवीन चेतना के प्रसार का माध्यम बनाया. इस प्रकार उन्होंने भाषा को राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय चेतना से भाषा को समृद्ध करने का दुहरा काम सम्पन्न किया. यह भी एक कारण है कि भारतेन्दु हिंदी के प्रति जनता का समर्थन जुटाकर आंदोलन की सृष्टि करने में समर्थ हुए. भारतीय जनता की आम बोलचाल की भाषा को

अपनाते हुए उन्होंने उस पर विशेष ध्यान दिया तथा व्यावहारिक स्तर पर अपनी रचनाओं में इसको आधार बनाया. इतना ही नहीं उन्होंने अपने समकालीन अन्य साहित्यकारों को हिंदी के प्रचार से जोड़ते हुए युगांतरकारी कार्य किया.

संदर्भ

1. शुक्ल, रामचंद्र: हिंदी साहित्य का इतिहास, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, पृष्ठ 246
2. द्विवेदी, हजारी प्रसाद: हिंदी साहित्य: उसका उद्भव और विकास, दिल्ली, यू. सी. कपूर एंड संज, 1952, पृष्ठ 245
3. वही, पृष्ठ 245
4. वही, पृष्ठ 245
5. वही, पृष्ठ 246
6. शुक्ल, रामचंद्र: हिंदी साहित्य का इतिहास, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, 1978 पृष्ठ 202
7. वही, पृष्ठ 289
8. वही, पृष्ठ 292
9. शर्मा, रामविलास: भारतेन्दु युग और हिंदी भाषा की विकास परम्परा, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1975, पृष्ठ 198.
10. शुक्ल, रामचंद्र: हिंदी साहित्य का इतिहास, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, पृष्ठ 238
11. वही, पृष्ठ 251
12. वही, पृष्ठ 251
13. सहाय, बाबू शिवनंदन: हरिश्चंद्र, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा 1978, पृष्ठ 109.
14. वही, पृष्ठ 109